## भारतीय जनतंत्र और सामाजिक सरोकार

## गिरीश्वर मिश्र

कुलपति, महात्मा गांधी अंतर्राष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय



**ग**णतंत्र दिवस अनुशासन और कार्य के प्रति प्रतिबद्धता का आह्वान करता है क्योंकि जनतंत्र की व्यवस्था अपनी ही जवाबदेही की होती है. आज जब देश के बाहर और भीतर की चुनौतियां बढ.ती जा रही हैं तो इस तरह के सरोकार और भी महत्व के हो जाते हैं. जब हमने अपना संविधान स्वीकार किया था तब का भारत और आज का भारत भूगोल और इतिहास की दृष्टि से बदल चुका है. हम भारतीय प्रायद्वीप के एक नए संस्करण में जी रहे हैं जहां देश के अंदर और

बाहर का नक्शा और सीमा रेखा कई बार बदली और अभी भी उलझाऊ मसला बनी हुई है. हमें नए जैव-राजनीतिक समीकरण बनाने पड. रहे हैं. प्रतियोगिता और संघर्ष के नित नए-नए मोर्चे खुल रहे हैं जिनसे जूझना खतरों और जोखिम भरा काम है. इस तरह की परिस्थितियां तमाम तरह की गैर जरूरी जिम्मेदारियां और भार बढ.ा देती हैं जिनसे आंतरिक संतुलन नकारात्मक रूप से प्रभावित होता है.

आज हमारी मुख्य चुनौतियां आर्थिक, भौतिक, सामाजिक और बौद्धिक संसाधनों की हैं. देश के भीतर जो मानव संपदा है उसे देखें तो लगेगा कि हम भाषा, धर्म जाति और समुदाय की नई श्रेणियों, उनकी पहचान और उनकी महत्वाकांक्षाओं को लेकर लगातार राष्ट्रीय और क्षेत्रीय स्तरों पर जूझते रहे हैं. इन सबके बावजूद अब तक की हमारे राष्ट्र की यात्रा महान रही है. हमने आम चुनाव कराए और सत्ताएं बदलीं, शिक्षा और स्वास्थ्य के संस्थान बनाए, तकनीकी और प्रबंधकीय शिक्षा के अच्छे केंद्र बनाए और उनमें कुछ उल्लेखनीय उपलब्धियां भी हासिल हुईं. पर इन सबका दायरा और रुझान अभिजात्य या 'एलीट' की ओर होता गया और सामान्य जन इनसे दूर होते गए. चूंकि लाभ पाने वाले वे सशक्त और संपन्न थे इसलिए वे ऐसी व्यवस्था को बनाने का काम करते रहे जिसमें एक व्यापक तबका, जिसमें गरीब और निम्न मध्य वर्ग के लोग आते हैं, वंचित बना रहे. इसका ज्वलंत उदाहरण है अंग्रेजी का वर्चस्व जो पूरे भारत में लगभग 11 प्रतिशत जनता की भाषा है पर समाज में आगे बढ.ने के लिए सीढ.ी सरीखी है. ज्ञान, नौकरी और आर्थिक विकास के लिए अंग्रेजी को बेहद जरूरी माना जाता है और अंग्रेजी माध्यम के स्कूल अच्छी धन उगाही करते हैं.

आज शिक्षा और स्वास्थ्य जैसी मूलभूत सुविधाओं की कीमत आम आदमी की हैसियत से बहुत ज्यादा हो चली है और वह हैरान-परेशान हो रहा है. उदारीकरण, वैश्वीकरण और निजीकरण की जो हवा देश में पिछले एक दो दशकों में बही है उसने समाज के ताने-बाने में गहरी उथल-पुथल मचा दी है. जीने के संसाधन जुटाना दिनोंदिन बढ.ती महंगाई के चलते किठन होता जा रहा है. मीडिया के कारण हमारी आकांक्षाओं के क्षितिज का निरंतर विस्तार होता जा रहा है. लिप्सा और लोभ ने अपराध, धन और राजनीति के बीच भयानक, पर मजबूत रिश्ता बना डाला है. इसके चलते आज चुनाव में धन बल और बाहुबल सफलता के लिए अनिवार्य सा हो गया है. लोगों के बीच दूरियां बढ.ती जा रही हैं और उन्हें प्रलोभन से पाटा जा रहा है. बहुलता और भिन्नता का आदर न कर लोग कृत्रिम ढंग से निकटता बढ.ा रहे हैं और ऐसी स्थिति के विस्फोटक

यदि इतिहास देखें तो देश की अनेक क्षेत्रों में बहुलता स्वाभाविक थी क्योंकि व्यक्ति की सत्ता से कहीं ज्यादा प्रभावी सत्ता उस विश्वमानव की थी जो हर एक के हृदय में समाया हुआ था. एक उदारता, जिसमें भिन्नता के साथ उस भिन्नता का आदर करते हुए जीने की गुंजाइश थी. हिंदू और मुसलमान एक दूसरे की भिन्नता को जायज मानते हुए अलग मानते हुए भी एक साथ रह सकते थे क्योंकि हर किसी में दूसरा भी मौजूद रहता था. धर्मिनरपेक्षता नहीं बिल्क धर्मपरायणता यानी यह मानना कि हमारा धर्म है कि हम दूसरे के धर्म की रक्षा करें, सिर्फ इस आधार पर कि मनुष्यता का यह तकाजा है कि हम सबमें एक तत्व को देख सकें- 'सर्वभूतेषु येनैकं भावमव्ययमीक्षते'. पर आज भिन्नता और अद्वितीयता या अनोखेपन का बोलबाला हुआ जा रहा है और उसका फल है द्वेष और घृणा. भारतीय जनतंत्र की स्थापना के सात दशक बीतने पर भी यह प्रश्न कठिन मुंह बाए खड.ा है कि हम सब साथ-साथ रहना कब सीख सकेंगे? ल्ल■



लोकमत समाचार 26-01-2015

## गणतंत्र दिवस विशेषांक २०१५

## भारतीय जनतंत्र और सामाजिक सरोकार



प्रो, गिरीक्सर मिस पामतंत्र दिवस का दिन अनुसामन के संस्थान बनाए, तकनोकी और और कार्य के प्रति प्रतिकारण का माहार करता है क्योंकि जनतंत्र की व्यवस्था अरपनी ही जन्मकोडी की होती है। आज जब देश के बाहर और भीतर की पुनीतियां बढ़ती जा खी हैं तो इस तरह के सरोकार और सामान्य जन इनमें दूर होता गया। भी महत्व के हो जाते हैं। जब हमने अपना संविधान संवीकार किया था भूगोल और इतिहास की दृष्टि से एक न्यापक तबका, जिसमें गरीब और निम्न मध्य वर्ग के लोग आहे. बदल खुका है। हम भारतीय प्रायदीय हैं, व्यक्ति बना रहे। इसका दलंत के एक नए संस्करण में की रहे हैं उद्यहरण है अंग्रेजी का वर्षाय जो पूरे बारत में लापबा ग्याव्ह प्रतिकृत भागत और सीमा रेखा कई बार जनता की भाषा है, पर समाज में बटारी और अभी भी उल्हास आगे बढ़ने के लिए सीडी सरीखी ममला बनी हुई है। हुमें तर जैव-है। ज्ञान, नीकरी और आर्थिक वजनीतिक समीकरण बनाने पह रहे विकास के लिए अंग्रेजी की बेटर है। प्रक्रियोगिक और संपर्व के नित जरूरी मान जात है और अंग्रेजी नए-नए मोचें खल रहे हैं जिनसे नुप्रना खतरों और जोखिम भग्र काम है। इस तरह को परिस्थितियाँ तमाम हरू की ग्रेंग करती हिम्मेदरियाँ

और भार बढ़ा देखे हैं जिनसे

आतेरिक योज्ञान तकाग्रात्मक रूप

आधिक, भौतिक, सामाजिक और थीदिक संस्कृत की हैं। देश के भीतर जो मानव संपदा है उसे देखें तो तरोगा कि इस भाषा, वर्ष प्रति और समुदाय की वर्ड केरियाँ उनकी पहचान और जनकी महत्त्वकांशाओं को लेकर लगतर राष्ट्रीय और क्षेत्रीय स्वयों पर जुकते रहे हैं। इन सबके बावजूद अब तक की हमारे राष्ट्र की यात्रा महान रही है। हमने अगर चुनाव कराए और सत्तारं बदली, शिक्षा और स्वास्थ्य प्रयोगकीय शिक्षा के अपने केंद्र बवाए और उनमें कुछ उल्लेखनीय उपलब्धियां भी हुई। पर इन सबका द्यापर और रखान अधिकाल पा 'एलीट' की ओर होता गया और चुंकि लाभ पाने वाले वे सलकत और संपन से इसलिए वे ऐसी व्यवस्था को बनाने का काम करते रहे जिसमें

से प्रश्तित होता है।

आज हमारी मुख्य पुरोतियाँ

उपल-पुचल मचा दी है। जीने के सामने 30 रहे हैं। संसाधन प्रदास दिलेटिन बढती

माध्यम के रुकुत अच्छी धन उपाठी के ब्रांच भयानक पर सकबत रिरङ का आदर करते हुए जीने की यह बरून कटिन मुह चाए खंडा है बना दाला है। इसके चलते आज गुंजइस थी। हिन्दू और मुमलमान कि हम सब साथ-साथ रहना कब आज शिक्ष और स्वास्थ्य जैसी क्वाव में धन बल और बहुबल एक दूधरे की फिनता को जायज सीख सकेंगे? सफलता के लिए अनिवार्य सा हो। मानते हुए अलग मानते हुए भी एक

हो चलों है और वह हैरान-प्रोशान जा रही हैं और उन्हें प्रलोधन से पारा में दूसरा भी पीज़्द खता था। हो रहा है। उद्योकरण, वैरचीकरण जा रहा है। बहुलता और भिन्तत का धर्मनिरपेश्वता नहीं और निजीकरण की जो हवा देश में अदर न कर लोग कृतिम ढंग से धर्मपायणता यानी यह मानना कि पिछले एक दो दशकों में नही है, जिकरत नहा रहे हैं और सी स्थिति हमारा धर्म है कि हम दूसरे के धर्म उसने समाज के लाने-बाने में गहरी के विस्फोरक परिणम आए दिन को रक्षा करें, सिर्फ इस आधार पर

महोगाई के चलते कठित होता जा अनेक क्षेत्रों में बहुतना स्वाधाविक 'सर्वपृतेषु वेनैक भावनाव्यवनीक्षते'। थी क्योंकि व्यक्ति की सन्त से कहीं। पर आज भिननता और अदिनीयत मीडिया के कारण हमारी ज्यादा प्रथानी सता तस विश्वमानन य अनेखेचन का बोलबाता हुआ आफ्रांशाओं के दिर्दित का रिरंतर की यो जो हर एक के इंट्य में जा रहा है और उसका फल है देश विस्तार होता जा रहा है। शिप्पा और समाया हुआ था। एक उदारता और-पूना। भारतीय जनतंत्र की क्षेत्र ने अपराध, धन और राजनीति जिसमें भिज़त के साथ उस भिज़ता स्थापना के सात दशक मीतने पर भी

कि मनुष्यता का यह तकाना है कि यदि इतिहास देखें तो देश की हम सक्यें एक तत्व को देख सकें -

आदमी की टेमियड से बहुद ज्यादा गया है। लोगों के बील दरियां बहुती साथ रह सकते से क्योंकि हर किसी थे। उन स्वतंत्रत का विश्व कर्म

और व्यक्तियान को अन्य स्था। उसमें मूल्य शानित और उससे जुट्टे लोगों का सामाजिक-एजनीतिक जीवन में उसके साथ भारत भारतामक ऐसी की पेट बढ़ती गई जिसके लिए

प्रयोजनें में देश और समाज के साथ करना की प्रमुख काम की गामा। किया किसी शर्त के जुड़ाय भी शुसर स्वतंत्रता पोडाम की स्मृति भार सी हमारे जीवन में इस तरह के जुहाब की जगह सिक्इटी गई। देश और

रवारंकत सहज प्रात थी, 'तियेव' थी. उनके व्यक्तितात जीवन के और उसका मुख चीनन, उपयोग या भी-भी करानो समय के साथ होती गई और सब कुछ राम विश्वार को भी विकासम्बद अध्यक्षे बनत गया। देश की, मातृभूमि की और भारत माता की समाज को भावनाओं को दुनिया से कत करना दक्षिणमुझी मनेवृति बहर खोच लिया गया। उसकी और पिछाड़ेपन को दर्शने काली क्याकरण प्रथारे अपर प्राची देते गए और एक तेज रचना जिन्हारी में समाज और देश के साथ स्वतंत्रता के बाद जन्मी पीड़ी के पवित्र नाते रिश्ते की जड़ी की शिस्य स्थानेकता की पहचान और उत्पादते करे सथ। इस नई

कि आज कई महे बुद्धिनीयी 'भारत' और 'भारतेयल' केले (क्षेट्रस्टेड) विषय सन् चके हैं। इस कल व्यापत और उपनेकत के तक काने जाने जाने गायी। इसके बड़ने अपनी शक्ति को पहचानय होता। ते जगह स्त्रे और वाजर का जाकारिक मार्गकार को इस तरबंध उर्थ मामुलेश सोक करूपान की और हम आगे बढ़ सकेंगे।

अंतरराष्ट्रीय हिंदी विकासियालय

